The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 3 | Issue 7 | July 2025
ISSN: 2583-973X (Online)
Website: www.theacademic.in

आर्य समाज आन्दोलन का अछतोद्धार में योगदान

मोहित गंगवार (शोध छात्र)

डॉ विकास रंजन कुमार (सहायक आचार्य), राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय बाजपुर, उत्तराखण्ड

ई-मेल- mohitkurmi143@gmail.com

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.16875296

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Accepted: 28-07-2025

Published: 10-08-2025

Keywords:

आर्य समाज, दलित, ब्राह्मण, समाज सुधारक, दयानन्द सरस्वती, वेद आदि।

ABSTRACT

उन्नीसवीं शताब्दी में अनेक सामाजिक आन्दोलन प्रारम्भ हुए जिन्होने हमारे भारतीय समाज की हीन हो चुकी दशा को सुधारने में अपना अमूल्य योगदान दिया। इन्ही सामाजिक स्धार आन्दोलनों में सेएक आर्य समाज आन्दोलन भी था। जिसकी स्थापना 10 अप्रैल 875 ई को महर्षि देव दयानन्द सरस्वती जी ने की थी। इस आन्दोलन ने हमारे हिन्दू समाज में जो कुरीतियाँ घर कर गई थी, उनको निकाल कर शुद्ध सनातन संस्कति को ही रहने दिया। जिसका निर्देशन हमे वेदों में प्रापत होता है। स्वामी दयाननद जी ने अपने ज्ञान का मुख्य स्त्रोत वेदों को माना और उन्हीं को प्रमाणिक माना है। अन्य ब्रह्मण ग्रंथो को स्वामी दयानन्द जी ने मान्यता नहीं दी। स्वामी दयानन्द जी के द्वारा स्थापित आर्य समाज आन्दोलन को भारत के सर्वप्रमुख सामाजिक सुधार आन्दोलन के रूप में जाना जाता है। समाज सुधार का कार्य तब तक प्रगति नहीं कर सकता जब तक उस समाज मे एकता न हो स्वामी दयानन्द जी ने सनातन 'धर्म के पतन का सबसे महत्वपूर्ण कारण जाति व्यवस्था जैसी कुरीति के कारण समाज के एक बडे वर्ग को हमने उनके अधिकारों से वंचित कर दिया था। समाज के इस वंचित या अछूत वर्ग के उद्धार के लिए स्वामी दयानन्द जी ने वेदों का प्रमाण देकर यह सिद्ध किया की कोई भी अछूत नहीं है। वेदों में कही भी जाति व्यवस्था नहीं, वेदों में वर्ण व्यवस्था का उल्लेख मिलता है जिसमें किसी को भी अपनी इच्छा के अनुसार कोई वर्ण चुनने की स्वतंत्रता दी गई है। अतः जाति व्यवस्था वर्ण व्यवस्था का विकृत रूप के कारण विकसित हुई और जाति व्यवस्था के कारण छुआ-छूत जैसी सामाजिक बुराई हमारे समाज में प्रवेश कर गई, जिसके कारण हमारा सामाजिक ताना-बाना नष्ट हो गया और हमारी आर्य जाति गुलाम हो गई। स्वामी 'दयानन्द सरस्वती जी ने अछूतों की स्थिति सुधार के लिए अनेक कार्य किये जिन्हें बाद में उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज

आन्दोलन के द्वारा आगे बढाया गया। आर्य समाज आन्दोलन के द्वारा अछतोद्धार के लिए जो विभिन्न कार्य और प्रयास किये गये उनका वर्णन हम इस शोध-पत्र में करेंगे। आज इतिहास में स्वामी दयानन्द जी को एक धार्मिक और सामाजिक सुधारक रूप में तो पढाया जाता है, परन्तु अछतोद्धार में आर्य समाज आन्दोलन का जो योगदान रहा उसे वह स्थान प्रदान नहीं किया जाता है। आज दलित चिंतकों में बाबा साहब भीमराव अम्वेडकर, महात्मा गांधी, ज्योतिबा फुले, पंडिता रमा बाई आदि को स्थान दिया जाता है, परन्तु आर्य समाज आन्दोलन के प्रणेता स्वामी दयानन्द जी को दलित चिंतक की श्रेणी में नहीं रखा जाता है। मैं अपने शोध-पत्र में तथ्यों के माध्यम से आर्य-समाज आन्दोलन को अछूतोद्धारक आन्दोलन की श्रेणी में स्थापित करने का प्रयास करूंगा।

प्रस्तावना:- स्वामी दयानंद सरस्वती इस युग के सबसे बडे समाज सुधारक थे। स्वामी दयानंद जी के समान साहसी, निर्भीक और स्पष्टवादी सुधारक भारत में अन्य कोई नहीं हुआ। स्वामी जी समाज को मानव के जीवन को प्रभावित करने वाले तत्वों में सर्वप्रमुख मानते थे। मानव सुधार और उसका विकास तब तक नहीं हो सकता है, जब तक उसको सबसे अधिक प्रभावित करने वाले तत्व समाज में सुधार नहीं होगा। इसलिए स्वामी दयानंद जी जीवन तथा देश के विकास के लिए समाज सुधार को आवश्यक मानते थे। मनुष्य के समस्त व्यवहार समाज में होते है और समाज उन्हें प्रभावित भी करता है। यदि मनुष्य समाज अथवा समाजिक जीवन की उपेक्षा कर दे तो संपूर्ण मनुष्य जीवन ही नहीं अपितु समस्त मानव सभ्यता अस्त व्यस्त हो जाती है।

स्वामी दयानंद सरस्वती जी ने समाज सुधार लिए वेदों को आधार बनाया। वैदिक धर्म की तरह वैदिक कालीन समाज भी शुद्ध और प्रकृतिक था। जिसमें आज समाज में व्याप्त कुरीतियाँ सम्मिलित नहीं थी। वेदों में जाति-व्यवस्था नहीं थी। इसलिए स्वामी दयानन्द जी ने उस जाति व्यवस्था को अस्वीकार कर दिया जो जन्म पर आधारित थी।

वेदों में वर्ण व्यवस्था का उल्लेख मिलता है- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। वेदों में समाज का चार वर्णों में विभाजन जन्म आधारित न होकर कर्म आधारित था जिसमें व्यक्ति के चरित्र, क्षमता और व्यावसायिक रूचि के आधार पर उसका वर्ण निर्धारित होता था।

उन्नीसवीं सदी में अछूतों की दशा- इस समय शुद्रों को विद्या ग्रहण करने की आज्ञा नहीं थी। वेद का मंत्र सुन लेने पर शूद्र के कान में पिघला हुआ सीसा भर दिया जाता था। ऊँची जाति के हिन्दू जन्म के झूठे अभिमान में छोटी जाति के हिन्दुओं पर विभिन्न प्रकार अत्याचार करते थे। उच्च जाति के लोग शूद्रों के साथ कुत्ते-बिल्ली आदि जन्तुओं से भी ज्यादा बुरा व्यवहार किया जाता था।[1]

शूद्रों को मन्दिरों और देवालयों में पूजा के लिए प्रवेश नहीं दिया जाता था। उच्च जाति के लोगों के ऊपर अगर शूद्रों की छाया भी पड़ जाती थी तो ब्राह्मण लोग नहाते थे और शूद्रों को आम सड़कों पर चलने की भी मनाही थी। शूद्रों को पढने के अधिकार से भी वंचित रखा जाता था, इसके साथी ही शूद्रों को साफ सुथरा रहने और धनवान बनने की भी इजाजत नहीं थी। शूद्रों की स्त्रियों का अपमान भी इस समय बुरा नहीं समझा जाता था।[2]

स्वामी दयानंद का दलित चिंतन - भारत में दलितों क हितों की चर्चा और उन्हें समानता देने वाले प्रथम व्यक्ति स्वामी दयानन्द सरस्वती जी थे। उन्होंने जाति प्रथा को पाप माना था। दलितों को सर्वण बनने का मौका प्रदान किया। जिसका प्रमाण उनके द्वारा स्थापित संस्था आज भी जाति प्रथा का विरोध करती है और वहाँ कोई दलित एवं सवर्ण नहीं होता है। वहाँ सब मानव मात्र हैं। स्वामी दयानन्द जी के अनुसार भारत की पराधीनता के सबसे महत्वपूर्ण कारण जन्ममूलक वर्णवाद एवं जातिवाद ही है। स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने जन्म मूलक वर्ण व्यवस्था का खण्डन किया तथा आपस्तम्ब आदि आचार्यों के प्रमाण प्रस्तुत कर एक ही जन्म में शूद्र चाण्डाल तक का ब्राह्मण बनना एवं ब्राह्मण आदि का चाण्डाल बनना प्रमाणित किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के अनुसार जन्ममूलक वर्ण व्यवस्था मिथ्याभिमान दम्भ एवं पाखन्डों की जननी है, इसमें कोई दो मत नहीं है। स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का दलितोद्धार में दूसरा महान कार्य छूत-छात ऊँच नींच अथवा अस्पृश्यता का मूलोच्छेदन करना था। स्वामी दयानंद जी के आगमन से पूर्व इस आर्य जाति में अपने चतुर्थ भाग को नीच और अछूत बनाया हुआ था और उसको समस्त धार्मिक सामाजिक एक नैतिक अधिकारों से वंचित किया हुआ था।[3]

स्वामी जी ने कहा की मानवों के बीच जन्म के आधार पर अस्पृश्यता की भावना का होना पाप है। वास्तविक अस्पृश्य तो सांप, बिच्छू, ततैय्या, शेर, चीता आदि है। यदि मानवों में मी अस्पृश्यों की कल्पना करनी है, तो डाकू, मद्यपी, दुराचारी, आततायी, राक्षस, पंचमार्गी, पिशाच, देशद्रोही आदि को अस्पृश्य मानने में कोई आपत्ति नहीं होगी।[4]

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने कहा कि धर्म किसी के बाप-दादा की निजी जायदाद नहीं है, धर्म तो प्रत्येक मन्ष्य की अपनी कमाई होती है। धर्म पर प्रत्येक मनुष्य का हक है वह जितना चाहे उतना धन कमा सकता है। संसार में किसी भी व्यक्ति में यह सामर्थ्य नहीं है कि वह किसी मनुष्य के लिये धर्म का द्वार बन्द करदे ईश्वर ने धर्म का द्वार सभी मानवों के लिए और समस्त संसार के लिए समान रूप से खोले हुए है और ईश्वर अपनी समस्त सन्तानों का पालन पोषण जाति पाँति, रंग रूप और ऊँच नीच कें आधार पर न करके समान रूप से सभी के साथ एक सा व्यवहार करता है।[5]

स्वामी दयानन्द जी ने बताया जिस प्रकार भगवान सूर्य का ताप भंगी से लेकर ब्राह्मण तक समान रूप से से पहुंचता है। भगवान इन्द्र क द्वारा जब वर्षा कराई जाती है तो वह भी रंक के झोपडें से लेकर राजा के महल तक समान रूप से होती है। वायु देवता गरीब और अमीर सबको समान रूप से अपनी स्वच्छता और ताजगी से महका देती है। उसी प्रकार के ईश्वर ने वेदों का ज्ञान सभी मनुष्यों को समान रूप से दिया है। उपरोक्त सिद्धान्त को न मानने के कारण ही हिन्दू जाति की संख्या लाखों में प्रतिवर्ष घट रही है।

श्री कृष्ण जी महाराज ने गीता के 5 वें अध्याय के 18 वें श्लोक में कहा है। **"शुनि चैव श्वपाके च पंडिता समदर्शिनः"** अर्थात पंडित वही है जो ब्राह्मण से लेकर चांडाल पर्यन्त सबको एक दृष्टि से देखे।[7]

इसी प्रकार मनु स्मृति के 10 वें अध्याय के 65 वें श्लोक में कहा गया है कि "जन्मना जायते शूद्र: संस्काराद् द्विज उच्यते" अर्थात जन्म से सब शूद्र उत्पन्न होते है। संस्कार से द्विज बनते है।[8]

आर्यसमाज आन्दोलन का दलितोद्धार कार्य - पं० गंगाराम ने दलितों के उत्थान लिए मुजफफरगढ में लम्बें समय तक रहे और वहां दलितों के लिए एक पाठशाला खोली जिसका नाम उन्होंने आर्य दलितोद्धार पाठशाला रखा। बडौदा के महाराजा भी आर्य समाजी थे उन्होंने 1908 में अपने राज्य में 300 पाठशालाओं की स्थापना की और दलित वर्ग के लिए शिक्षा ग्रहण करना अनिवार्य कर दिया। महाराज ने इस कार्य में आर्य समाज के तत्कालीन महान कार्यकर्त्ता पंडित आत्माराम का पर्याप्त सहयोग प्राप्त किया। पंडित आत्माराम ने शूद्रों के छात्रावास का सुपरिन्टेन्डेन्ट होना स्वीकार किया। इसके साथ ही पंडित आत्माराम को अछूतों क लिए खोले गये स्कूलों का निरीक्षक भी स्वीकार किया गया।[9]

सन् 1921 में निम्न वर्ग के उत्थान के कार्य को अधिक गहन रूप देने लिये श्रद्धानन्द जी ने दिल्ली में दलितोद्धार की सभा का संचालन किया। इसका लक्ष्य अछूतो के खोये हुये अधिकारों की उपलब्धि व उनके लिये पाठशालायें खोलना तथा उन्हें शिक्षा प्रदान करना था।[10]

चौधरी जयमल सिंह गुजर जो कि सहारनपुर के एक अत्याधिक धनी व्यक्ति थे, ने अछूतों को अपने कुओं से जल खींचने की आज्ञा दे दी। आर्य समाज ने अनेकों दलितोद्धार सम्मेलन करायें। सन 1926 में पांचवाँ सम्मेलन हुआ जिसकी अध्यक्षता पंडित मोती लाल नेहरू ने की। उस सभा उनका कथन था कि आर्य समाज से पूर्व अन्य किसी संस्था ने असमानता को दूर करने का प्रयास नहीं किया। डा० मुन्जे की अध्यक्षता में एक सभा हुई, यहाँ अछूतों के उद्धार एवं बेकारी की समस्या को दूर करने के लिए प्रयत्न किए गये। आर्य समाज के प्रयत्नों के परिणामस्वरूप अन्य समाज व सभायें भी दलितोद्धार कार्य में योगदान देने लगी। 17 अप्रैल 1922 को आर्य समाजी नेता लाला लाजपत राय की अध्यक्षता में अखिल भारतीय अछूतोद्धार सभा हूई। जिसमें उन्होनें लोगों से अछूतों को कुओं से जल खींचने की आज्ञा देने का अनुरोध किया।[11]

1933 में बम्बई आर्य समाज ने एक विशाल सभा की जिसमें आर्य समाज ने लोगों से अनुरोध किया कि वह अछूतों को अपने समान समझें एवं अछूतों के अन्दर ये भावना भर दें कि वह हिन्दू जाति की भुजायें है।[12]

आर्य समाज के दलित उत्थान कार्य पर विद्वानों के शब्द

पाश्चात्य विचारक रोमा रोलों के शब्दों में:-

दलित वर्ग को उठाने, अस्पृश्यता के उन्मूलन के लिए श्री शंकाराचार्य से लेकर राजा राममोहन राय तक जो बात किसी भारतीय सुधारक और विचारक को न सूझी दयानन्द ने दलितों के लिए अस्पृश्य समझे जाने वाले भाइयों के अधिकारों के लिए, वेद का प्रमाण देकर सबको आश्चर्यचकित कर दिया। ऐक्यवाद का सिंहनाद गुंजता हुआ वेदवादी दयानन्द जब यथेमा वाचं कल्याणीम् यह वैदिक ऋचा लेकर शास्त्रार्थ के समर में उतरा तो जन्माभिमानी लोगों में खलबली मच गई।[13]

महान दलित नेता डॉ० भीमराव अम्बेडकर ने कहा है।

"स्वामी जी दलितों के सर्वोत्तम हितकर्त्ता व हितचिन्तक थे"[14]

पंजाब केसरी लाला लाजपत राय ने लिखा है:-

"हिन्दुओं के समाज सुधार क्षेत्र में पतित और अछतों के अधिकारों की रक्षा तथा आर्य समाज में उन्हें भी सम्मिलित करने का कार्य आर्य समाज के महानतम कार्यों में से है।"[15]

निष्कर्ष -

आर्य समाज आन्दोलन भारत का पहला ऐसा समाज सुधार आन्दोलन था जिसने दलितों के उद्धार के लिए बहुत अथक प्रयास किये। आर्य समाज अपने इन प्रयासों में बहुत अधिक सफल रहा क्योंकि आर्य समाज आन्दोलन यह बात स्थापित करने में सफल रहा की छूआ छूत धर्म का हिस्सा नहीं है। इसका वर्णन वेदों के अन्तर्गत भी कहीं नही है। इसलिए जो कार्य वेद विरूद्ध है। जो बात हमारे वेदों में भी नहीं मिलती उस छूआ छूत को हमने अपने समाज का हिस्सा क्यों बना रखा है। इसलिए इस छूआ छूत का त्याग कर हम अपने समाज का उत्थान कर सके और हमारे दलित भाइयों को भी समाज में वही सम्मान मिल सके जो अन्य भाइयों को प्राप्त है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

- सन्तराम, बी०ए०, दयान्द, इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग, पृष्ठ संख्या- 2
- वही०, पृष्ठ संख्या- 3
- प० शिव दयालु, महान दयानन्द, अधिष्ठाता आर्य संघ प्रकाशन तिलक पार्क, मेरठ सदर पृष्ठ सं०- 25
- वहीं०, पृष्ठ संख्या- 26
- शारदा चांदकरण, दलितोद्धार, प्रधान आर्य स्वराज्य सभा, लाहौर, पृष्ठ संख्या-6
- वहीं०, पृष्ठ संख्या- 7
- श्री मदभगवद गीता, गीता प्रेस गोरखपुर, पृष्ठ संख्या-388
- शारदा चांदकरण दलितोद्धार, प्रधान आर्य स्वराज्य सभा, लाहौर, पृष्ठ संख्या-19
- चोपड़ा मधु, भारत के सामाजिक एवं धार्मिंक जीवन में आर्य समाज का योगदान, सत्यम् पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-75
- वहीं०, पृष्ठ संख्या- 77
- वहीं०, पृष्ठ संख्या- 80
- वहीं०, पृष्ठ संख्या- 81
- 'जिज्ञासु' राजेन्द्र, एकता का शंखनाद लेख 'अस्पृश्यता मरण व्यवस्था', वैदिक प्रकाशन सीताराम बाजार, दिल्ली, संस्करण मार्च 1998, पृष्ठ संख्या- 40

- शास्त्री कुशलदेव, आर्य समाज और डॉ० अम्बेडकर, श्री घूडमल प्रहलाद कुमार आर्य धर्मार्थ न्यास हिण्डौन सिटी (राजस्थान), पृष्ठ संख्या- 75

- चोपडा मधु, भारत के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में आर्य समाज का योगदान, सत्यम् पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या- 81